Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 03, Issue 10, pp 308-312, October, 2026

अग्निपुराण में लोक कल्याण एवं जनसेवा की अवधारणा: एक समाजशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक अध्ययन

[1] रासबिहारी महतो, [2] डॉ. जी. के. मुंडा

[1] (Rasbihari Mahato), शोधार्थी, बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय।
[2] (Dr. G. K. Munda), सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय।

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.23310700

सारांश :

अग्निपुराण भारतीय पुराण-साहित्य की एक महत्वपूर्ण कृति है, जिसमें धार्मिक आख्यानों के साथ-साथ धर्म, नीति, राजधर्म, न्याय, सामाजिक व्यवस्था, वास्तु, चिकित्सा, कला, ज्योतिष तथा विविध व्यावहारिक ज्ञान-विषयों का विवेचन प्राप्त होता है। इस बहुविषयक स्वरूप के कारण अग्निपुराण का अध्ययन केवल एक धार्मिक ग्रंथ के रूप में नहीं, अपितु भारतीय सामाजिक और सांस्कृतिक चिंतन के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में भी किया जा सकता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य अग्निपुराण में निहित लोक कल्याण और जनसेवा की अवधारणा का समाजशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक दृष्टि से विश्लेषण करना है।

अग्निपुराण में राजधर्म का विवेचन करते हुए राजा के प्रमुख दायित्वों में प्रजा की रक्षा, न्याय की स्थापना, सामाजिक व्यवस्था का संरक्षण तथा राज्य के कमजोर वर्गों की सहायता को विशेष महत्व दिया गया है। राजधर्म से संबंधित अध्यायों में यह विचार स्पष्ट होता है कि शासक का अधिकार उसकी प्रजा के प्रति उत्तरदायित्व से जुड़ा हुआ है। निर्धन, असहाय, वृद्ध और विधवा आदि के निर्वाह की व्यवस्था का उल्लेख इस बात को प्रमाणित करता है कि लोक कल्याण को केवल धार्मिक दान तक सीमित नहीं रखा गया, अपितु उसे शासन और सामाजिक उत्तरदायित्व से भी जोड़ा गया है (Agni Purana, ch. 225)।

इस शोध में 'लोक कल्याण' को व्यापक अर्थ में ग्रहण किया गया है, जिसमें प्रजा-रक्षा, न्याय, सामाजिक सुरक्षा, आजीविका, सार्वजनिक स्वास्थ्य, नैतिक आचरण, दान, करुणा, सामुदायिक हित और लोकसेवा सम्मिलित हैं। अध्ययन का आधार मुख्यतःअग्निपुराण के पाठ का विश्लेषण तथा पुराण-साहित्य एवं भारतीय सामाजिक चिंतन पर उपलब्ध द्वितीयक साहित्य है। अध्ययन यह निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि अग्निपुराण में लोक कल्याण राज्य, समुदाय और व्यक्ति — तीनों स्तरों पर एक नैतिक उत्तरदायित्व के रूप में उभरता है।

मुख्य शब्द: *अग्निपुराण; लोक कल्याण; जनसेवा; राजधर्म; प्रजा-रक्षा; सामाजिक उत्तरदायित्व; न्याय; दान; करुणा; भारतीय संस्कृति।*

1. प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में 'लोक' शब्द केवल जनसमुदाय का सूचक नहीं है, अपितु व्यापक सामाजिक जीवन और सामूहिक हित का भी संकेतक है। इसी प्रकार 'कल्याण' का अर्थ केवल आर्थिक समृद्धि नहीं, बल्कि व्यक्ति, परिवार, समुदाय और राज्य के समन्वित सुख, सुरक्षा और उन्नति से जुड़ा हुआ है। भारतीय चिंतन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की पुरुषार्थ-परंपरा के भीतर सामाजिक कर्तव्य और लोकहित के अनेक सूत्र विकसित हुए। पुराण-साहित्य ने इन विचारों को कथा, आख्यान, संवाद, नीति और धार्मिक उपदेश के माध्यम से व्यापक समाज तक पहुँचाया।

अग्निपुराण अठारह महापुराणों में गिना जाता है और अपने विषय-विस्तार के कारण विशेष महत्व रखता है। लूडो रोशर ने पुराणों के अध्ययन में इस बात पर बल दिया है कि पुराणों को केवल मिथकीय आख्यानों के संग्रह के रूप में समझना पर्याप्त नहीं है; वे भारतीय धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं के निर्माण एवं संप्रेषण के महत्वपूर्ण माध्यम भी रहे हैं (Rocher)। अग्निपुराण की सामग्री में राजधर्म, न्याय, दंडनीति, वास्तु, आयुर्वेद, काव्यशास्त्र, ज्योतिष तथा अन्य अनेक विषयों का समावेश इसी व्यापकता को दर्शाता है।

लोक कल्याण के संदर्भ में अग्निपुराण का राजधर्म-विमर्श विशेष महत्व रखता है। शासन का उद्देश्य केवल राजसत्ता को सुरक्षित रखना नहीं, अपितु प्रजा की रक्षा और सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखना भी माना गया है। राजा से यह अपेक्षा की जाती है कि वह न्याय करे, अपराध को नियंत्रित करे, संपत्ति की रक्षा करे तथा ऐसे लोगों की सहायता करे जो स्वयं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ हैं। इस प्रकार शासन, धर्म और लोकहित के बीच एक नैतिक संबंध स्थापित होता है।

प्रस्तुत अध्ययन इसी नैतिक-सामाजिक संबंध का विश्लेषण करता है। यह शोध यह देखने का प्रयास करता है कि अग्निपुराण में 'जनसेवा' का विचार किन प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूपों में व्यक्त हुआ है तथा उसमें राज्य एवं सामान्य व्यक्ति के दायित्वों का किस प्रकार निर्धारण किया गया है। साथ ही, आधुनिक 'कल्याणकारी राज्य' के संदर्भ में प्राचीन अवधारणाओं की तुलना करते समय ऐतिहासिक भिन्नताओं को भी ध्यान में रखा गया है।

2. साहित्य समीक्षा

अग्निपुराण के अध्ययन के लिए संस्कृत पाठ, प्राचीन संस्करण तथा आधुनिक अनुवाद प्रमुख स्रोत हैं। जे. एल. शास्त्री, जी. पी. भट्ट और एन. गंगाधरन द्वारा संपादित एवं अनूदित Agni Purana, Ancient Indian Tradition and Mythology श्रृंखला में प्रकाशित हुआ है। Motilal Banarsidass के प्रकाशनों में इसके चार भाग उपलब्ध हैं, जो अग्निपुराण के विस्तृत अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण संदर्भ हैं (Shastri, Bhatt, and Gangadharan)।

मनमथनाथ दत्त का अंग्रेज़ी अनुवाद भी अग्निपुराण के अध्ययन की पुरानी और उपयोगी कृतियों में से एक है। इसके अतिरिक्त पुराण-साहित्य के इतिहास और स्वरूप पर लूडो रोशर की The Purāṇas एक मान्य आधुनिक विद्वत्तापूर्ण संदर्भ है। रोशर पुराणों की रचना-परंपरा, पाठ-भेद और विषय-विस्तार की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं (Rocher)।

राजेन्द्रचन्द्र हाजरा का Puranic Records on Hindu Rites and Customs पुराणों में धार्मिक आचार, संस्कार और सामाजिक प्रथाओं के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार पी. वी. काणे का History of Dharmaśāstra भारतीय धर्मशास्त्रीय परंपरा में धर्म, राजधर्म, सामाजिक कर्तव्य और विधि-विधान के ऐतिहासिक विकास को समझने के लिए एक आधारभूत संदर्भ प्रदान करता है (Kane)।

पुराणों में निहित सामाजिक विचारों के संदर्भ में यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि विभिन्न पुराणों के पाठों की रचना अलग-अलग कालखंडों में हुई और उनके वर्तमान रूप में अनेक स्तरों की सामग्री सम्मिलित हो सकती है। अतःअग्निपुराण में किसी विचार की उपस्थिति को किसी निश्चित ऐतिहासिक काल के प्रत्यक्ष सामाजिक व्यवहार का प्रमाण मान लेना उचित नहीं होगा। प्रस्तुत अध्ययन पाठ में व्यक्त आदर्शों और सामाजिक अवधारणाओं का विश्लेषण करता है, न कि प्रत्येक निर्देश के वास्तविक ऐतिहासिक अनुपालन का दावा।

3. अध्ययन के उद्देश्य

1. अग्निपुराण में लोक कल्याण और जनसेवा से संबंधित विचारों का विश्लेषण करना।
2. राजधर्म और प्रजा-रक्षा के संबंध को समाजशास्त्रीय दृष्टि से स्पष्ट करना।
3. निर्धन, असहाय, वृद्ध, विधवा तथा अन्य कमजोर वर्गों के प्रति शासक के दायित्व का अध्ययन करना।
4. न्याय, दंड, संपत्ति-सुरक्षा और प्रशासन को लोक कल्याण की अवधारणा से जोड़कर देखना।
5. दान, करुणा, सत्य, अलोभ और सामाजिक नैतिकता का जनसेवा से संबंध स्पष्ट करना।
6. अग्निपुराण में लोकहित और राज्य-उत्तरदायित्व के संबंध को समझना।
7. प्राचीन भारतीय लोक कल्याण-विचार की आधुनिक सामाजिक कल्याण की अवधारणा से तुलनात्मक संभावनाओं और सीमाओं की पहचान करना।

4. परिकल्पना

1. अग्निपुराण में राजधर्म का एक प्रमुख आधार प्रजा की रक्षा और लोकहित है।
2. अग्निपुराण में लोक कल्याण की अवधारणा आर्थिक सहायता से भी व्यापक है और इसमें न्याय, सुरक्षा, सामाजिक संरक्षण तथा नैतिक उत्तरदायित्व सम्मिलित हैं।
3. जनसेवा को व्यक्तिगत लोभ से मुक्त नैतिक आचरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।
4. राज्य और व्यक्ति दोनों को सामाजिक कल्याण की प्रक्रिया में उत्तरदायी माना गया है।
5. अग्निपुराण के लोक कल्याण संबंधी विचार आधुनिक कल्याणकारी राज्य से कुछ वैचारिक समानताएँ रखते हैं, किंतु दोनों को ऐतिहासिक रूप से समान व्यवस्था नहीं माना जा सकता।

5. शोध-पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः गुणात्मक और पाठ-विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक स्रोत के रूप में अग्निपुराण के उपलब्ध संस्कृत पाठ तथा उसके प्रामाणिक/प्रचलित अनुवादों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में पुराण-साहित्य, धर्मशास्त्र, भारतीय राजनीतिक चिंतन और सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास से संबंधित मान्य विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों को सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन में वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक और तुलनात्मक — तीनों दृष्टियों का प्रयोग किया गया है। पहले अग्निपुराण में लोक कल्याण संबंधी कथनों और निर्देशों की पहचान की गई है; फिर उन्हें राजधर्म, सामाजिक नैतिकता और सामुदायिक उत्तरदायित्व के संदर्भ में समझा गया है। आधुनिक कल्याणकारी राज्य से तुलना करते समय समानता को केवल वैचारिक स्तर तक सीमित रखा गया है, ताकि ऐतिहासिक संस्थाओं को कृत्रिम रूप से एक-दूसरे के समान न मान लिया जाए।

6. अग्निपुराण का स्वरूप और विषय-विस्तार

अग्निपुराण को एक बहुविषयक पुराण के रूप में देखा जाता है। इसकी विभिन्न परंपराओं और संस्करणों में अध्यायों की संख्या और पाठ में भिन्नता मिलती है। आधुनिक विद्वानों के अनुसार यह ग्रंथ धार्मिक आख्यानों के साथ-साथ राज्यव्यवस्था, वास्तु, आयुर्वेद, धनुर्वेद, काव्य, ज्योतिष तथा अन्य विषयों पर भी सामग्री प्रदान करता है। इसी कारण इसका अध्ययन भारतीय ज्ञान-परंपरा के अंतर्विषयक स्वरूप को समझने में उपयोगी सिद्ध होता है (Rocher)।

इस बहुविषयकता का संबंध लोक कल्याण की अवधारणा से भी है। समाज के कल्याण के लिए केवल धार्मिक शिक्षा पर्याप्त नहीं होती; शासन, न्याय, स्वास्थ्य, आवास, आर्थिक व्यवस्था और नैतिक आचरण भी आवश्यक होते हैं। अग्निपुराण में इन विविध क्षेत्रों की उपस्थिति यह संकेत देती है कि ज्ञान को सामाजिक जीवन की आवश्यकताओं से पृथक नहीं माना गया।

7. राजधर्म और प्रजा-रक्षा

अग्निपुराण के राजधर्म संबंधी अध्यायों में राजा और प्रजा के संबंध को नैतिक उत्तरदायित्व के आधार पर समझाया गया है। राजा का दायित्व केवल राज्य की सीमा और सत्ता की रक्षा तक सीमित नहीं, अपितु प्रजा की सुरक्षा और न्यायपूर्ण व्यवस्था सुनिश्चित करना भी है। प्रजा पर शासन करने का अधिकार उसके संरक्षण के दायित्व के साथ जुड़ा हुआ है।

राजधर्म के इस स्वरूप में 'रक्षा' का अर्थ अत्यंत व्यापक है। बाहरी शत्रु से सुरक्षा के साथ-साथ अपराध, चोरी, अन्याय और सामाजिक अराजकता से सुरक्षा भी इसमें सम्मिलित है। राजा के न्यायपूर्ण निर्णयों से समाज में विश्वास और व्यवस्था बनी रहती है। इस प्रकार राजधर्म का सामाजिक उद्देश्य स्थिर और सुरक्षित जीवन की परिस्थितियाँ निर्मित करना है (Agni Purana, chs. 218–223)।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह संबंध महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें राज्य और समाज के बीच पारस्परिक उत्तरदायित्व की कल्पना दिखाई देती है। राज्य संसाधन प्राप्त करता है और प्रशासन चलाता है; इसके बदले वह सुरक्षा, न्याय और व्यवस्था प्रदान करता है। इस प्रकार राजसत्ता को अपनी नैतिक वैधता लोकहित से ही प्राप्त होती है।

8. निर्धन, असहाय और कमजोर वर्गों का कल्याण

अग्निपुराण के लोक कल्याण-विमर्श में सबसे उल्लेखनीय पक्ष कमजोर वर्गों के संरक्षण से संबंधित निर्देश हैं। अध्याय 225 में राजा से निर्धन, असहाय और वृद्ध लोगों के निर्वाह तथा विधवाओं एवं ऐसे परिवारों की सहायता की अपेक्षा की गई है, जिनके पति विदेश गए हों (Agni Purana, ch. 225)।
यह विचार इसलिए महत्वपूर्ण है कि यहाँ कल्याण को केवल धार्मिक दान के रूप में नहीं, बल्कि शासन की जिम्मेदारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जिन व्यक्तियों के पास पर्याप्त पारिवारिक या आर्थिक सहारा नहीं है, उनके जीवन-निर्वाह की व्यवस्था करना शासक का दायित्व माना गया है। यह सामाजिक सुरक्षा की एक प्रारंभिक वैचारिक अभिव्यक्ति के रूप में अध्ययन योग्य है।
फिर भी आधुनिक सामाजिक सुरक्षा योजनाओं और इस प्राचीन व्यवस्था के बीच सीधी समानता स्थापित करना उचित नहीं होगा। आधुनिक राज्य नागरिक अधिकार, संवैधानिक समानता और संस्थागत कल्याण योजनाओं पर आधारित है, जबकि अग्निपुराण का सामाजिक ढाँचा राजधर्म, वर्णाश्रम और पारंपरिक सामाजिक संबंधों के संदर्भ में निर्मित है। अतःसमानता केवल इस स्तर पर है कि दोनों व्यवस्थाओं में असुरक्षित व्यक्तियों की सहायता को सार्वजनिक महत्व दिया जाता है।

9. न्याय, संपत्ति-सुरक्षा और लोक कल्याण

लोक कल्याण का एक महत्वपूर्ण आधार न्याय है। यदि समाज में कमजोर व्यक्ति अपनी संपत्ति, जीवन और सम्मान की रक्षा नहीं कर सकता, तो केवल आर्थिक सहायता की व्यवस्था भी पर्याप्त नहीं होगी। अग्निपुराण में चोरी, संपत्ति-विवाद, अनाथ या अवयस्क की संपत्ति और विधवा की संपत्ति आदि के संरक्षण से संबंधित राजकीय दायित्वों का वर्णन प्राप्त होता है (Agni Purana, ch. 223)।
इससे स्पष्ट होता है कि लोक कल्याण को न्यायिक सुरक्षा से जोड़ा गया है। राजा से यह अपेक्षा है कि वह अपराधी को दंड दे और पीड़ित के अधिकार की रक्षा करे। समाजशास्त्रीय दृष्टि से न्याय की यह व्यवस्था सामाजिक विश्वास को बनाए रखने का प्रमुख साधन है।

10. कर-व्यवस्था और राजकीय उत्तरदायित्व

राज्य की आर्थिक व्यवस्था और प्रजा के कल्याण का संबंध भी अग्निपुराण के राजधर्म-विमर्श में स्पष्ट दिखाई देता है। कराधान राज्य की आय का साधन है, किंतु राजकीय आय के साथ-साथ प्रजा की सुरक्षा और शासन-व्यवस्था का दायित्व भी जुड़ा हुआ है। इस प्रकार कर केवल राजकीय उपभोग का साधन नहीं, अपितु राज्य की सार्वजनिक जिम्मेदारियों को पूरा करने का माध्यम भी माना जा सकता है।
यहाँ एक नैतिक सिद्धांत उभरता है — राजकीय अधिकार और राजकीय दायित्व परस्पर संबंधित हैं। यदि राजा प्रजा से संसाधन प्राप्त करता है, तो उसे प्रजा की रक्षा, न्याय और व्यवस्था सुनिश्चित करनी चाहिए। आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत में कर और सार्वजनिक सेवा के बीच जिस प्रकार संबंध देखा जाता है, उससे इसका एक सीमित तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

11. जनसेवा, दान और सामाजिक नैतिकता

अग्निपुराण में लोकहित का विचार केवल राज्य तक सीमित नहीं है। व्यक्तिगत स्तर पर दान, करुणा, सत्य, संयम और परोपकार जैसे गुणों को भी सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक माना गया है। अध्याय 238 में गरीबों पर अत्याचार न करने तथा प्राणियों के प्रति करुणा रखने जैसी नैतिक शिक्षाएँ प्राप्त होती हैं (Agni Purana, ch. 238)।
दान की अवधारणा को भी सामाजिक उत्तरदायित्व के संदर्भ में समझा जा सकता है। दान केवल पुण्य प्राप्त करने का साधन नहीं, अपितु संसाधनों के पुनर्वितरण और जरूरतमंद की सहायता का माध्यम भी बनता है। यद्यपि दान-आधारित व्यवस्था और आधुनिक अधिकार-आधारित कल्याणकारी व्यवस्था में मूलभूत अंतर है, फिर भी दोनों में सामाजिक सहायता का तत्व उपस्थित है।
जनसेवा की नैतिकता में लोभ का त्याग विशेष महत्त्व रखता है। सार्वजनिक दायित्व निभाने वाले व्यक्ति यदि निजी लाभ को प्राथमिकता देते हैं, तो लोकहित प्रभावित होता है। अग्निपुराण में ज्ञान, सदाचार और अलोभ की अपेक्षा इस समस्या के नैतिक समाधान की ओर संकेत करती है।

12. लोकसेवा और सामाजिक संस्थाएँ

समाज केवल राज्य की संस्था से संचालित नहीं होता। परिवार, धार्मिक संस्थाएँ, पेशागत समूह और स्थानीय समुदाय भी सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखते हैं। अग्निपुराण में विभिन्न सामाजिक और पेशागत समूहों तथा उनके आचार का उल्लेख प्राप्त होता है। इससे यह समझने में सहायता मिलती है कि सामाजिक कल्याण एक बहुस्तरीय प्रक्रिया है।
लोकसेवा की व्यापक अवधारणा में सामुदायिक सहभागिता आवश्यक है। यदि सामाजिक उत्तरदायित्व केवल राजा का कार्य हो, तो समाज की नैतिक भागीदारी सीमित रह जाएगी। इसके विपरीत जब व्यक्ति, परिवार और समुदाय भी परोपकार, दान और सहायता के कार्य करते हैं, तब लोक कल्याण का आधार अधिक व्यापक होता है।

13. स्वास्थ्य और जनकल्याण

अग्निपुराण की विषय-वस्तु में चिकित्सा संबंधी ज्ञान भी सम्मिलित है। स्वास्थ्य सामाजिक जीवन की एक आधारभूत आवश्यकता है। चिकित्सा, औषधि और शरीर-संबंधी ज्ञान की उपस्थिति इस बात की ओर संकेत करती है कि मानव-कल्याण को शारीरिक स्वास्थ्य से पृथक नहीं माना गया।
प्राचीन चिकित्सा-विचारों को आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के समान नहीं माना जा सकता। फिर भी स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान का संरक्षण और प्रसार लोक कल्याण के इतिहास में महत्वपूर्ण है। व्यक्ति का स्वास्थ्य परिवार, श्रम और सामुदायिक जीवन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा होता है। इसलिए चिकित्सा-ज्ञान को सामाजिक कल्याण के व्यापक संदर्भ में देखा जा सकता है।

14. पर्यावरण, पशु और व्यापक लोकहित

भारतीय धार्मिक साहित्य में मनुष्य और प्रकृति के संबंध को अनेक स्तरों पर व्यक्त किया गया है। अग्निपुराण में भी पशु, वनस्पति, तीर्थ, जल और धार्मिक-सांस्कृतिक स्थानों से संबंधित अनेक प्रसंग प्राप्त होते हैं। इनका अध्ययन पर्यावरणीय नैतिकता और सांस्कृतिक भूगोल के संदर्भ में किया जा सकता है।
पशु-संरक्षण संबंधी धार्मिक विचारों को आधुनिक पशु-अधिकार की अवधारणा के समान नहीं कहा जा सकता, परंतु वे मनुष्य और अन्य जीवों के बीच नैतिक संबंध की कल्पना अवश्य करते हैं। व्यापक अर्थ में यह लोकहित की ऐसी अवधारणा की ओर संकेत करता है, जिसमें मानव जीवन को प्राकृतिक और जीव-जगत से पृथक नहीं समझा जाता।

15. लोक कल्याण और सांस्कृतिक मूल्य

लोक कल्याण केवल भौतिक सुविधा का प्रश्न नहीं है। किसी समाज की भाषा, परंपरा, धार्मिक विश्वास, कला, उत्सव और नैतिक मूल्य भी उसके सामूहिक जीवन का अभिन्न अंग होते हैं। अग्निपुराण में कला, काव्य, स्थापत्य और धार्मिक अनुष्ठानों की विस्तृत सामग्री प्राप्त होती है। इससे स्पष्ट होता है कि सांस्कृतिक जीवन और सामाजिक जीवन को परस्पर पृथक नहीं माना गया।
सांस्कृतिक दृष्टि से जनसेवा का अर्थ समाज की सांस्कृतिक निरंतरता की रक्षा भी हो सकता है। मंदिर, तीर्थ, उत्सव और धार्मिक संस्थाएँ केवल पूजा के केंद्र नहीं, अपितु सामाजिक सहभागिता के स्थल भी रही हैं। इसलिए सांस्कृतिक संरक्षण को भी लोक कल्याण के व्यापक अर्थ में सम्मिलित किया जा सकता है।

16. अग्निपुराण और आधुनिक कल्याणकारी राज्य: एक तुलनात्मक दृष्टि

आधुनिक कल्याणकारी राज्य नागरिकों को शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, रोजगार, खाद्य सुरक्षा और अन्य सार्वजनिक सेवाएँ उपलब्ध कराने की एक संस्थागत व्यवस्था विकसित करता है। अग्निपुराण में ऐसी आधुनिक संस्थागत संरचना उपलब्ध नहीं है। अतःदोनों के बीच प्रत्यक्ष ऐतिहासिक निरंतरता स्थापित करना उचित नहीं होगा।
फिर भी तुलनात्मक अध्ययन में कुछ वैचारिक समानताएँ अवश्य दिखाई देती हैं। दोनों में शासन की वैधता को किसी न किसी रूप में जनहित और सुरक्षा से जोड़ा जा सकता है; दोनों में कमजोर लोगों की सहायता का विचार विद्यमान है; और दोनों में न्यायपूर्ण प्रशासन को सामाजिक स्थिरता के लिए आवश्यक माना जाता है। अंतर केवल यह है कि अग्निपुराण का ढाँचा धार्मिक-नैतिक राजधर्म पर आधारित है, जबकि आधुनिक कल्याणकारी राज्य संवैधानिक अधिकार, नागरिकता और आधुनिक प्रशासनिक संस्थाओं पर आधारित है।
इस तुलना का उद्देश्य आधुनिक व्यवस्था को प्राचीन व्यवस्था से श्रेष्ठ सिद्ध करना अथवा प्राचीन व्यवस्था को आधुनिक व्यवस्था का प्रतिरूप घोषित करना नहीं है। इसका उद्देश्य भारतीय सामाजिक विचार के ऐतिहासिक विकास में लोकहित और सामाजिक उत्तरदायित्व की विभिन्न अवधारणाओं को समझना मात्र है।

17. समाजशास्त्रीय विश्लेषण

समाजशास्त्रीय दृष्टि से अग्निपुराण के लोक कल्याण-विमर्श को तीन स्तरों पर समझा जा सकता है — संस्थागत, सामुदायिक और व्यक्तिगत। संस्थागत स्तर पर राजा और प्रशासन प्रजा की रक्षा और न्याय के लिए उत्तरदायी हैं। सामुदायिक स्तर पर सामाजिक समूह और धार्मिक संस्थाएँ सहायता, दान और सांस्कृतिक संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। व्यक्तिगत स्तर पर करुणा, सत्य, संयम और परोपकार की अपेक्षा की जाती है।
इन तीनों स्तरों का समन्वय सामाजिक एकता को सुदृढ़ करने वाला माना जा सकता है। यदि राज्य न्यायपूर्ण हो, समुदाय सहयोगी हों और व्यक्ति नैतिक रूप से उत्तरदायी हों, तो सामाजिक व्यवस्था अधिक स्थिर बनी रहती है। अग्निपुराण का लोक कल्याण-विचार इसी व्यापक नैतिक-सामाजिक व्यवस्था का एक अभिन्न भाग है।

18. सांस्कृतिक विश्लेषण

सांस्कृतिक दृष्टि से लोक कल्याण की अवधारणा धर्म और सामाजिक मूल्य के बीच संबंध को स्पष्ट रूप से सामने लाती है। यहाँ 'धर्म' केवल पूजा-पद्धति नहीं, बल्कि कर्तव्य और सामाजिक मर्यादा का भी संकेतक है। राजा का धर्म प्रजा की रक्षा है; व्यक्ति का धर्म सत्य, दया और परोपकार है; सामाजिक संस्थाओं का दायित्व सामुदायिक व्यवस्था और सांस्कृतिक जीवन को बनाए रखना है।
इस प्रकार अग्निपुराण में धर्म का सामाजिक स्वरूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। धार्मिक आदर्श तभी सामाजिक अर्थ ग्रहण करते हैं, जब वे सुरक्षा, न्याय, सहायता और करुणा जैसे व्यवहारों में परिणत होते हैं। यही कारण है कि लोक कल्याण की अवधारणा का अध्ययन पुराण-साहित्य के सामाजिक इतिहास को समझने में विशेष महत्व रखता है।

19. परिणाम

अध्ययन से प्राप्त प्रथम परिणाम यह है कि अग्निपुराण में लोक कल्याण एक बहुआयामी अवधारणा है। इसमें सुरक्षा, न्याय, सामाजिक संरक्षण, आजीविका, स्वास्थ्य, दान, करुणा और सांस्कृतिक जीवन — सभी सम्मिलित हैं।
दूसरा परिणाम यह है कि राजधर्म और लोक कल्याण के बीच घनिष्ठ संबंध स्थापित किया गया है। राजा की शक्ति के साथ प्रजा की रक्षा का दायित्व भी जुड़ा हुआ है। इसलिए राजसत्ता को केवल अधिकार के रूप में नहीं, अपितु उत्तरदायित्व के रूप में भी समझा गया है।
तीसरा परिणाम कमजोर वर्गों के संदर्भ में प्राप्त होता है। निर्धन, असहाय, वृद्ध और विधवाओं के निर्वाह की व्यवस्था का उल्लेख प्राचीन भारतीय राजनीतिक-सामाजिक चिंतन में सामाजिक संरक्षण की एक महत्वपूर्ण अवधारणा को सामने लाता है।
चौथा परिणाम यह है कि जनसेवा का नैतिक आधार व्यक्ति के चरित्र से जुड़ा हुआ है। ज्ञान, करुणा, अलोभ और दान जैसे गुण सामाजिक हित के लिए अनिवार्य माने गए हैं।
पाँचवाँ परिणाम यह है कि अग्निपुराण को आधुनिक कल्याणकारी राज्य का प्रत्यक्ष पूर्वरूप कहना ऐतिहासिक दृष्टि से सावधानी की माँग करता है। वैचारिक समानताएँ होने पर भी दोनों की संस्थागत और सामाजिक संरचनाएँ भिन्न हैं।

20. निष्कर्ष

अग्निपुराण में लोक कल्याण एवं जनसेवा की अवधारणा भारतीय सामाजिक और सांस्कृतिक चिंतन के एक महत्वपूर्ण पक्ष को प्रस्तुत करती है। इस ग्रंथ में धर्म को सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा गया है और राजधर्म का आधार प्रजा-रक्षा, न्याय तथा सामाजिक व्यवस्था को माना गया है। निर्धन, असहाय, वृद्ध और विधवा जैसे वर्गों के प्रति सहायता का निर्देश यह दर्शाता है कि कमजोर वर्गों की सुरक्षा को राजकीय दायित्व का अभिन्न अंग माना गया।

अग्निपुराण का लोक कल्याण-विचार केवल राजा तक सीमित नहीं है। दान, करुणा, सत्य, अलोभ और परोपकार के माध्यम से व्यक्ति को भी समाज के प्रति उत्तरदायी बनाया गया है। इसी प्रकार सामाजिक और धार्मिक संस्थाएँ सामुदायिक जीवन को संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार लोक कल्याण एक बहुस्तरीय नैतिक व्यवस्था के रूप में सामने आता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि सामाजिक कल्याण के लिए केवल आर्थिक संसाधन पर्याप्त नहीं हैं; न्याय, सामाजिक सुरक्षा, नैतिकता और सामुदायिक सहभागिता भी उतनी ही आवश्यक हैं। सांस्कृतिक दृष्टि से धर्म सामाजिक जीवन को नैतिक अर्थ प्रदान करता है और लोकहित को धार्मिक कर्तव्य से जोड़ता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि अग्निपुराण में लोक कल्याण की अवधारणा भारतीय ज्ञान-परंपरा में 'धर्म से लोकमंगल' की एक महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है। यह अवधारणा आधुनिक सामाजिक कल्याण की संस्थाओं के समान तो नहीं है, परंतु सामाजिक सुरक्षा, जनहित, कमजोर वर्गों की सहायता और सार्वजनिक उत्तरदायित्व जैसे प्रश्नों के ऐतिहासिक अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण वैचारिक सामग्री अवश्य प्रदान करती है।

संदर्भ सूची (References)

1. Agni Purana. Translated by N. Gangadharan, edited by J. L. Shastri and G. P. Bhatt, Parts 1–4, Motilal Banarsidass, 1984–1987.
2. Agni Purana. Translated by Manmatha Nath Dutt, 2 vols., Calcutta, 1903–1904.
3. Dimmitt, Cornelia, and J. A. B. van Buitenen. Classical Hindu Mythology: A Reader in the Sanskrit Purāṇas. Temple University Press, 1978.
4. Hazra, R. C. Studies in the Puranic Records on Hindu Rites and Customs. Motilal Banarsidass, 1987.
5. Kane, P. V. History of Dharmaśāstra: Ancient and Mediaeval Religious and Civil Law in India. 5 vols., Bhandarkar Oriental Research Institute, 1930–1962.
6. Rocher, Ludo. The Purāṇas. Otto Harrassowitz, 1986.
7. Shastri, J. L., G. P. Bhatt, and N. Gangadharan, editors/translators. The Agni Purana. Parts 1–4, Ancient Indian Tradition and Mythology Series, vols. 27–30, Motilal Banarsidass, 1984–1987.
8. Winternitz, Moriz. History of Indian Literature. Vol. 1, Motilal Banarsidass, 1981.
9. अग्निपुराण (संस्कृत पाठ), सम्पादकः बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, २००१।
10. भरतमुनि, नाट्यशास्त्र (संस्कृत पाठ with Hindi Translation), चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, १९९८।
11. आनन्दवर्धन, ध्वन्यालोक (संस्कृत पाठ with Hindi Translation), चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, २००५।
12. मम्मट, काव्यप्रकाश (संस्कृत पाठ with Hindi Translation), चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, २००३।
13. विश्वनाथ कविराज, साहित्यदर्पण (संस्कृत पाठ with Hindi Translation), चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, २००२। भामह, काव्यालंकार (संस्कृत पाठ), चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, १९९९।
14. हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, २००५।
15. डॉ. नगेन्द्र, 'भारतीय काव्यशास्त्र', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।